ओम् नमो भगवते वासुदेवाय
ॐ नमो नारायणाय

श्रीविष्णुमहापुराण

प्रथम अंश

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्। देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत्॥

पहला अध्याय

श्रीसूत उवाच

ॐ पराशरं मुनिवरं कृतपौर्वाह्णिकक्रियम्। मैत्रेयः परिपप्रच्छ प्रणिपत्याभिवाद्य च ॥१॥
त्वत्तो हि वेदाध्ययनमधीतमखिलं गुरो। धर्मशास्त्राणि सर्वाणि तथाङ्गानि यथाक्रमम्॥२॥
त्वत्प्रसादान्मुनिश्रेष्ठ मामन्ये नाकृतश्रमम्। वक्ष्यन्ति सर्वशास्त्रेषु प्रायशो येऽपि विद्विषः ॥३॥
सोऽहमिच्छामि धर्मज्ञ श्रोतुं त्वत्तो यथा जगत्। बभूव भूयश्च यथा महाभाग भविष्यति॥४॥
यन्मयं च जगद्ब्रह्मन्यतश्चैतच्चराचरम्। लीनमासीद्यथा यत्र लयमेष्यति यत्र च॥५॥

ग्रन्थ का उपक्रम

तत्त्वेन यश्चिदचिदीश्वरतत्स्वभाव, भोगापवर्ग तदुपायगतिरुदारः ।
संदर्शयन् निरमिमीतपुराणरत्नं, तस्मै नमो मुनिवराय पराशराय ॥
व्यासाय विष्णुरूपाय व्यासरूपाय विष्णवे ।
नमो वै ब्रह्मनिधये वासिष्ठाय नमो नमः ॥

श्रीसूतजी ने कहा— नित्यकर्मों से निवृत्त हुए मुनियों में श्रेष्ठ महर्षि पराशर को साष्टाङ्ग प्रणिपात करके तथा उनको प्रणाम करके महर्षि मैत्रेय ने उनसे पूछा ॥१॥ हे गुरुदेव ! मैंने आपकी ही सन्निधि में सम्पूर्ण वेदों तथा सम्पूर्ण धर्मशास्त्रों एवं वेदाङ्गों का क्रमशः अध्ययन किया है ॥२॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! आपकी कृपा से मुझसे भिन्न मेरे विद्वेष करने वाले भी मेरे विषय में यह नहीं कह सकेंगे कि मैंने सभी शास्त्रों के अध्ययन में परिश्रम नहीं किया है ॥३॥ हे धर्मज्ञ! हे महाभाग ! अब मैं आपके श्रीमुख से यह सुनना चाहता हूँ कि यह चराचरात्मक जगत् किस प्रकार से उत्पन्न हुआ? तथा पुनः अगले कल्प में भी किससे उत्पन्न होगा ?॥४॥ (इस श्लोक के द्वारा जगत् के उपादान कारण तथा निमित्त कारण के विषय में प्रश्न किया गया है ।) हे ब्रह्मन् ! यह जगत् किमात्मक है (क्योंकि जो वस्तु जिससे उत्पन्न

यत्प्रमाणानि भूतानि देवादीनां च सम्भवम्। समुद्रपर्वतानां च संस्थानं च यथा भुवः ॥६॥
सूर्यादीनां च संस्थानं प्रमाणं मुनिसत्तम। देवादीनां तथा वंशान्मनून्मन्वन्तराणि च ॥७॥
कल्पान् कल्पविभागांश्च चातुर्युगविकल्पितान्। कल्पान्तस्य स्वरूपं च युगधर्मांश्च कृत्स्नशः ॥८॥
देवर्षिपार्थिवानां च चरितं यन्महामुने। वेदशाखाप्रणयनं यथावद्व्यासकर्तृकम् ॥९॥
धर्मांश्च ब्राह्मणादीनां तथा चाश्रमवासिनाम्। श्रोतुमिच्छाम्यहं सर्वं त्वत्तो वासिष्ठनन्दन ॥१०॥
ब्रह्मन्प्रसादप्रवणं कुरुष्व मयि मानसम्। येनाहमेतज्जानीयां त्वत्प्रसादान्महामुने ॥११॥

श्रीपराशर उवाच

साधु मैत्रेय धर्मज्ञ स्मारितोऽस्मि पुरातनम्। पितुः पिता मे भगवान् वसिष्ठो यदुवाच ह ॥१२॥
विश्वामित्रप्रयुक्तेन रक्षसा भक्षितः पुरा। श्रुतस्तातस्ततः क्रोधो मैत्रेयाभून्ममातुलः ॥१३॥
ततोऽहं रक्षसां सत्रं विनाशाय समारभम्। भस्मीभूताश्च शतशस्तस्मिन्सत्रे निशाचराः ॥१४॥
ततः सङ्क्षीयमाणेषु तेषु रक्षस्स्वशेषतः। मामुवाच महाभागो वसिष्ठो मत्पितामहः ॥१५॥
अलमत्यन्तकोपेन तात मन्युमिमं जहि। राक्षसा नापराध्यन्ति पितुस्ते विहितं हि तत् ॥१६॥
मूढानामेव भवति क्रोधो ज्ञानवतां कुतः। हन्यते तात कः केन यतः स्वकृतभुक्पुमान् ॥१७॥

होती है, वह तदात्मक ही होती है। मिट्टी से उत्पन्न होने वाला घट मृद्द्रव्यात्मक ही होता है, वह इसलिए कि घट का उपादान कारण मिट्टी ही है।) यह सम्पूर्ण चराचरात्मक जगत् किससे उत्पन्न हुआ है? सृष्टि से पूर्व यह सम्पूर्ण जगत् किसमें लीन था? और पुनः प्रलय काल के आने पर किसमें लीन हो जायेगा?॥५॥ और इन (आकाशादि) महाभूतों का परिमाण, देवता आदि (मनुष्य, स्थावर, जङ्गम आदि) की उत्पत्ति, समुद्रों, पर्वतों तथा पृथिवी आदि का विस्तार ॥६॥ सूर्य आदि का संस्थान तथा उनका परिमाण, देवताओं आदि के वंश, मनुओं तथा मन्वन्तरों ॥७॥ (सत्ययुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग तथा कलियुग) इन चारों युगों में विभक्त कल्पों तथा कल्पों के विभागों, प्रलय के स्वरूप तथा युगों के पृथक्-पृथक् सम्पूर्ण धर्मों को, देवताओं, ऋषियों तथा राजाओं के चरित्र को, हे महामुने! महर्षि व्यास कृत वेदों की शाखाओं के यथावत् निर्माण, ब्राह्मणादि वर्णों, तथा (ब्रह्मचर्यादि) आश्रमों के धर्मों को हे वासिष्ठ-नन्दन! (महर्षि शक्ति के पुत्र!) मैं आपके मुखारविन्द से सुनना चाहता हूँ ॥८-१०॥ हे ब्रह्मन्! आप अपने मन को मेरे विषय में प्रसादोन्मुख कीजिये, जिससे कि हे महामुने! मैं आपकी कृपा से इन सारी बातों को जान सकूँ॥११॥ **श्रीपराशर महर्षि ने कहा—** हे धर्मज्ञ मैत्रेय! मेरे पिताजी के पिता (पितामह) महर्षि वसिष्ठ ने जिसको मुझे सुनाया था, उस प्राचीन वृत्तान्त को तुमने अच्छी तरह से स्मरण दिला दिया ॥१२॥ हे मैत्रेय! जब मैंने यह सुना कि प्राचीन काल में महर्षि विश्वामित्र के द्वारा प्रेरित होकर किसी राक्षस ने मेरे पिता (शक्ति महर्षि) को खा लिया तो मुझको अत्यधिक क्रोध उत्पन्न हुआ ॥१३॥ उसके पश्चात् मैंने राक्षसों का विनाश करने के लिए सत्र (यज्ञ) प्रारम्भ किया और उस यज्ञ में सैकड़ों राक्षस जल कर भस्म हो गये ॥१४॥ उसके पश्चात् सम्पूर्ण राक्षसों को विनष्ट होते हुए देखकर मेरे पितामह महाभाग वसिष्ठ ने मुझसे कहा॥१५॥ हे वत्स! अत्यधिक क्रोध करना ठीक नहीं है। अब इसे समाप्त करो। इसमें राक्षसों ने कोई भी अपराध नहीं किया है, तुम्हारे पिता को तो ऐसा ही होना था ॥१६॥ क्रोध तो अज्ञानियों को होता है, ज्ञानियों को नहीं। कौन किसको मारता है? जीव तो अपने ही पूर्वकृत कर्मों का फल भोगता

सञ्चितस्यापि महता वत्स क्लेशेन मानवैः । यशसस्तपसश्चैव क्रोधो नाशकरः परः ॥१८॥
स्वर्गापवर्गव्यासेधकारणं परमर्षयः । वर्जयन्ति सदा क्रोधं तात मा तद्वशो भव ॥१९॥
अलं निशाचरैर्दग्धैर्दीनैरनपकारिभिः । सत्रं ते विरमत्वेतत्क्षमासारा हि साधवः ॥२०॥
एवं तातेन तेनाहमनुनीतो महात्मना । उपसंहृतवान्सत्रं सद्यस्तद्वाक्यगौरवात् ॥२१॥
ततः प्रीतः स भगवान् वसिष्ठो मुनिसत्तमः । सम्प्राप्तश्च तदा तत्र पुलस्त्यो ब्रह्मणः सुतः ॥२२॥
पितामहेन दत्तार्घ्यः कृतासनपरिग्रहः । मामुवाच महाभागो मैत्रेय पुलहाग्रजः ॥२३॥

पुलस्त्य उवाच

वैरे महति यद्वाक्याद्गुरोरद्याश्रिता क्षमा । त्वया तस्मात्समस्तानि भवाञ्छास्त्राणि वेत्स्यति॥२४॥
सन्ततेर्न ममोच्छेदः क्रुद्धेनापि यतः कृतः । त्वया तस्मान्महाभाग ददाम्यन्यं महावरम्॥२५॥
पुराणसंहिताकर्ता भवान्वत्स भविष्यति। देवतापारमार्थ्यं च यथावद्वेत्स्यते भवान् ॥२६॥
प्रवृत्ते च निवृत्ते च कर्मण्यस्तमला मतिः । मत्प्रसादादसन्दिग्धा तव वत्स भविष्यति॥२७॥
ततश्च प्राह भगवान्वसिष्ठो मे पितामहः । पुलस्त्येन यदुक्तं ते सर्वमेतद्भविष्यति ॥२८॥
इति पूर्वं वसिष्ठेन पुलस्त्येन च धीमता । यदुक्तं तत्स्मृतिं याति त्वत्प्रश्नादखिलं मम॥२९॥
सोऽहं वदाम्यशेषं ते मैत्रेय परिपृच्छते। पुराणसंहितां सम्यक् तां निबोध यथातथम् ॥३०॥

है ॥१७॥ हे वत्स! क्रोध मनुष्यों के द्वारा अत्यन्त कष्टपूर्वक सञ्चित यश तथा तपस्या का प्रबल विनाशक है॥१८॥ हे तात ! लोक तथा परलोक दोनों को बिगाड़ने वाले इस क्रोध का परमर्षि गण सर्वदा त्याग करते हैं, अतएव तुम इसके वश में मत होओ ॥१९॥ इन दीन तथा निरपराध निशाचरों को दग्ध करना बन्द करो । तुम अपने यज्ञ को यहीं समाप्त करो । साधु पुरुष तो क्षमा प्रधान हुआ करते हैं ॥२०॥ अपने महात्मा पितामह महर्षि वसिष्ठजी के द्वारा इस प्रकार से समझाये जाने पर, मैंने उनकी बातों का समादर करते हुए उस यज्ञ को समाप्त कर दिया ॥२१॥ उसके कारण मुनियों में श्रेष्ठ ऐश्वर्य सम्पन्न महर्षि वसिष्ठ प्रसन्न हो गये । उसी समय ब्रह्माजी के पुत्र महर्षि पुलस्त्य वहाँ आ गये ॥२२॥ मेरे पितामह महर्षि वसिष्ठ ने उन्हें अर्घ्य प्रदान किया और उन्होंने आसन ग्रहण किया, हे मैत्रेय! महर्षि पुलह के बड़े भाई महर्षि पुलस्त्य ने मुझसे कहा ॥२३॥ **महर्षि पुलस्त्य ने कहा—** हृदय में बहुत बड़ा बैर होने पर भी तुमने अपने पितामह के कथन का समादर करते हुए क्षमा को अपना लिया है; अतएव तुम सभी शास्त्रों के ज्ञाता होओगे ॥२४॥ चूकि अत्यन्त क्रुद्ध होकर भी तुमने मेरी सन्तान का अत्यन्त विनाश नहीं किया, अतएव मैं तुम्हें एक और महान् वरदान दे रहा हूँ ॥२५॥ हे वत्स ! तुम पुराणसंहिता के रचयिता होओगे और परादेवता के स्वरूप के ज्ञाता होओगे ॥२६॥ हे वत्स ! मेरी कृपा से प्रवृत्ति कर्मों (भोगों को प्रदान करने वाले कर्मों) तथा निवृत्ति कर्मों (मोक्ष को प्रदान करने वाले कर्मों) के विषय में तुम्हारी सन्देह रहित तथा निर्मल बुद्धि होगी॥२७॥ उसके पश्चात्, मेरे पितामह **महर्षि वसिष्ठ ने कहा—** महर्षि पुलस्त्य ने जो कुछ भी कहा है वह सत्य ही होगा॥२८॥ हे मैत्रेय ! पूर्वकाल में बुद्धिमान महर्षि वसिष्ठ ने तथा महर्षि पुलस्त्य ने जो कहा था, वह तुम्हारे इस प्रश्न को सुनकर मुझे स्मृत हो गया ॥२९॥ हे मैत्रेय ! तुम्हारे प्रश्नानुसार उस पुराण संहिता को तुम्हें सुनाता हूँ; उसको तुम ध्यान पूर्वक अच्छी तरह से धारण करो ॥३०॥ यह जगत् भगवान् विष्णु से उद्भूत है, और यह उन्हीं

विष्णोः सकाशादुद्भूतं जगत्तत्रैव च स्थितम् । स्थितिसंयमकर्ताऽसौ जगतोऽस्य जगच्च सः ॥३१॥

इति श्रीविष्णुमहापुराणे प्रथमेंऽशे प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

दूसरा अध्याय

श्रीपराशर उवाच

अविकाराय शुद्धाय नित्याय परमात्मने । सदैकरूपरूपाय विष्णवे सर्वजिष्णवे ॥१॥
नमो हिरण्यगर्भाय हरये शङ्कराय च । वासुदेवाय ताराय सर्गस्थित्यन्तकारिणे ॥२॥
एकानेकस्वरूपाय स्थूलसूक्ष्मात्मने नमः । अव्यक्तव्यक्तरूपाय विष्णवे मुक्तिहेतवे ॥३॥
सर्गस्थितिविनाशानां जगतो यो जगन्मयः । मूलभूतो नमस्तस्मै विष्णवे परमात्मने ॥४॥
आधारभूतं विश्वस्याप्यणीयांसमणीयसाम् । प्रणम्य सर्वभूतस्थमच्युतं पुरुषोत्तमम् ॥५॥
ज्ञानस्वरूपमत्यन्तनिर्मलं परमार्थतः । तमेवार्थस्वरूपेण भ्रान्तिदर्शनतः स्थितम् ॥६॥

में स्थित है। वे ही इस जगत् की स्थिति (पालन) करने वाले तथा इसका संयम (लय) करने वाले हैं। वे ही जगत् स्वरूप हैं। अर्थात् यह जगत् विष्णवात्मक ही है ॥३१॥

इस तरह श्रीविष्णुमहापुराण के प्रथम अंश के पहले अध्याय का शिवप्रसाद द्विवेदी (श्रीधराचार्य) कृत हिन्दी अनुवाद सम्पूर्ण हुआ ॥१॥

महर्षि पराशर कृत भगवत् स्तुति के पश्चात् सृष्टि से पूर्व की स्थिति का वर्णन; प्राकृतिक चौबीस तत्त्वों के विचार के पश्चात् जगत् की सृष्टि तथा स्थिति (पालन) के कर्ता भगवान् विष्णु की महत्ता का वर्णन

श्रीपराशर महर्षि ने कहा— विकार रहित, शुद्धस्वरूप नित्य, परमात्मा, सदा एक समान बने रहने वाले, सर्व व्यापक सबको अपने वश में रखने वाले, ब्रह्मारूप से जगत् की सृष्टि करने वाले, श्रीहरि रूप से जगत् का पालन करने वाले, शङ्कर रूप से जगत् का संहार करने वाले तथा अपने भक्तों को मोक्ष प्रदान करने वाले भगवान् वासुदेव को नमस्कार है ॥१-२॥ जो एक होकर भी अनेक रूपों वाले हैं, (कार्यावस्था में) स्थूल रूप से रहने वाले तथा (कारणावस्था में) सूक्ष्म रूप से रहने वाले (प्रलयकाल में) जिनका स्वरूप अव्यक्त रहता है तथा (सृष्टिकाल में) जिनका स्वरूप व्यक्त रहता है, (अपने शरणागत जीवों को) मुक्ति प्रदान करने वाले, भगवान् विष्णु को नमस्कार है॥३॥ जो जगन्मय, जगत् की सृष्टि, स्थिति तथा विनाश करने वाले हैं, जो जगत् के (अभिन्न निमित्तोपादान) कारण स्वरूप हैं, उन परमात्मा भगवान् विष्णु को नमस्कार है ॥४॥ जो सम्पूर्ण जगत् के आधररूप होकर भी सूक्ष्मातिसूक्ष्म स्वरूप हैं, सभी भूतों में (अन्तर्यामी रुप से) स्थित रहने वाले, अच्युत (अपनी प्रतिज्ञा से कभी च्युत नहीं होने वाले) ऐसे (स्वेतर समस्त चेतनाचेतनों से उत्तम होने के कारण लोक तथा वेद में) पुरुषोत्तम शब्द से अभिहित किए जाने वाले (भगवान् विष्णु को) प्रणाम करके ॥५॥ जो वस्तुतः ज्ञान स्वरूप हैं, तथा (अखिल हेय प्रत्यनीक होने के कारण